Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XV, Issue No. 1, April-2018, ISSN 2230-7540

मध्य प्रदेश में पीड़ितों के अधिकार

Pushpalata Patel[1]* Prof. (Dr.) N. K. Thapak[2]

[1] Research Scholar, SVNU, Sagar, MP

[2] LAW Department, SVNU, Sagar, MP

***सार –** आपराधिक न्याय शास्त्र में अपराधी के खिलाफ सबूत एकत्र करना मुकद्मा चलाना व सजा देना न्याय प्रशासन का प्रमुख कार्य माना गया है। न्यायशास्त्र के लगभग सभी सिद्धांत अपराधी को सजा दिलाने की दिशा में कार्य करते है। पुलिस, अभियोजन ओर न्यायपालिका भी अपराधी को केन्द्र बिन्दु मान कर ही कार्य करते है। पीड़ित द्वारा पुलिस के समक्ष रिपोर्ट करने के तुरंत बाद उसकी तरफ से अपराधी को सजा दिलवाने का जिम्मा सरकार द्वारा ले लिया जाता है। इस सारी प्रक्रिया में पीड़ित व्यक्ति पर्दे के पीछे चला जाता है, जबकि वास्तव में प्रक्रिया का केन्द्रक उसे होना चाहिये था, क्योकि सारी प्रकिया उसी के लाभ, उसी की रक्षा और उसी के अस्तित्व के लिये हैं। सबसे पहले 1947 में एक फ्रेंच वकील बेंजामिन मेंडल सोन ने पीड़ित व्यक्ति को केन्द्र बिन्दु मानते हुए अपराध काअध्ययन किया। अपने शास्त्र को उसने 'पीड़ित-शास्त्र (Victimology) का नाम दिया। यहाँ यह चर्चा करना सुसंगत होगा कि हालांकि आधुनिक काल में पीडित व्यक्ति को उपेक्षित किया गया था। परंतु विष्व इतिहास के प्राचीन और मध्यकाल में वह उपेक्षित नहीं था। भारत में मनुस्मृति, यूनान में होमर कृत इलियड, असीरिया में हम्मुरवी की संहिता आदि में पीड़ित व्यक्ति को क्षतिपूर्ति दिलवाने आदि का उल्लेख मिलता है।*

---------------------------------X---------------------------------

प्रस्तावना

अपराध शास्त्र में पीड़ित व्यक्ति को अलग-अलग तरह से परिभाषित किया गया है। किंतु हम मानवाधिकार संस्थाओं के दृष्टिकोण से पीड़ित की पहचान करने का प्रयास करेंगे। संयुक्त राष्ट्र महासभा 29 नवंबर, 1985 को एक घोषणापत्र जारी किया गया, जो ''अपराध और शक्ति-दुरूपयोग के पीड़ितों हेतु न्याय के सिद्धांतों का घोषणापत्र'' के नाम से प्रसिद्ध है। इस घोषणापत्र में कहा गया है- ''पीड़ित से अर्थ है यह व्यक्ति, जिसके साथ व्यक्तिगत या सामूहिक रूपसे, शारीरिक या मानसिक क्षति, भावनात्मक पीड़ा, आर्थिक हानि या मूल अधिकारों का वंचन, किसी कार्य या कार्यलोप के द्वारा कारित किये गये हैं और जो सदस्य राष्ट्रों में लागू कानूनों का उल्लंघन करके किये गये हैं।''

कुछ अपराधशास्त्रियों ने इस परिभाषा को विस्तार दे दिया है। उदाहरणार्थ, फ्रैंज फेमोन के अनुसार पीड़ित व्यक्ति केवल शारीरिक या मानसिक क्षति प्राप्त करने वाला व्यक्ति ही नहीं है, बल्कि उसके परिवार के सदस्य, मित्र और रिश्तेदार भी हैं। क्योंकि वे भी किसी न किसी प्रकार की पीड़ा झेलते हैं। विशेष तौर पर यह बात मृतक के मामले में लागू होती है, क्योंकि इस मामले में पीड़ित उसके परिवारजन भी होते हैं उन्हे भी प्रतिकर या राहत पहुँचाने की कोशिश की जानी चाहिए।

पीड़ित व्यक्तियों का वर्गीकरण

आधुनिक काल में मेंडल सोहन ने ही इस क्षेत्र में कार्य किया। उसने पीड़ित व्यक्तियों का वर्गीकरण भी किया है, जिसके अनुसार:-

1. पूर्णतः निर्दोष पीड़ित पहला प्रकार है। हम इस वर्ग में बच्चों और बेहोश व्यक्तियों को रख सकते हैं।

2. आंशिक अपराधी पीड़ित - जैसे कोई गर्भवती महिला किसी नीम हकीम से गर्भपात करानेके दौर मारी जाये।

3. स्वैच्छिक पीड़ित - जैसे सुखमृत्यु द्वारा मारा गया व्यक्ति।

4. अपराधी से अधिक दोषी पीड़ित - उदाहरणार्थ, जो व्यक्ति किसी अन्य को अपराध करने के लिये उकसाता है और अन्य व्यक्ति द्वारा अपराध करने पर पीड़ित होता है।

www.ignited.in

5. पूर्णतः दोषी पीड़ित - वह है जो अन्य पर हमला करता है, परंतु दूसरे द्वारा आत्मरक्षा करते हुए खुद मारा जाता है।

एक अन्य वर्गीकरण वॉन हेंटिंग नामक मशहूर अपराध शास्त्री द्वारा किया गया है।[16] यह वर्गीकरण पुलिस प्रशासन द्वारा अपराधों की रोकथाम में मदद देने वाला भी हो सकता है। इसके अनुसार पीड़ित व्यक्ति चार प्रकार के माने गये है -

1. **उत्तेजक पीडित -** इस वर्ग में वे व्यक्ति आते हैं, जो अपराधी को अपनी क्रिया द्वारा उत्तेजना देते हैं और प्रतिक्रिया में अपराधी अधिक क्रूरता से अपराध करने के लिये उत्तेजित हो जाता है। भारतीय दंड संहिता में वर्णित अचानक प्रकोपन से किये गये अपराध इसी वर्ग में आते हैं।

2. **सहयोगी पीड़ित -** इस वर्ग में वे व्यक्ति आते है, जो अपने लाभ या लालच के कारण अपराध में सहायता देते हैं पर खुद अपराध के शिकार बन जाते हैं।

3. **आत्म-समर्पण शील पीड़ित -** इस वर्ग के पीड़ितों से अभिप्राय उन लोगों से है जो अपराधियों के समक्ष आत्मसमर्पण कर देते हैं। मोहल्ले के गुंडों को हफ्ता देने वाले लोग इस प्रकार के पीड़ितों के उदाहरण है। पुलिस को ऐसे अपराध होने से रोकने के लिये इनका मनोबल बढ़ाना चाहिये।

4. **अकर्मण्य पीड़ित -** ये ऐसे व्यक्ति होते हैं, जो स्वयं ही अपराधी को अपराध करने का मौका देते हैं और सावधानियाँ नहीं रखते हैं। अलमारी खुली छोड़ देना, मकान में ताला न लगाकर बाहर जाना आदि इस तरह के उदाहरण हैं। पुलिस तंत्र द्वारा प्रचार करके घरों, सार्वजनिक स्थानों, वाहनों आदिसे संबंधित चोरी इत्यादित पर रोकथाम लगाने के लिये लोगों को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

अनेक कारण ऐसे हैं जिनके चलते पीड़ित व्यक्ति पुलिस या अदालत में रिपोर्ट करने में झिझक करता है।[17] कुछ कारण इस प्रकार माने गये हैं -

पीड़ित के अधिकार

1. बहुत से पीड़ित यह मानते हैं कि परिवाद करने से कोई लाभ नहीं होगा। इसका कारण हमारी न्याय व्यवस्था के प्रति जनता का कम विश्वास हो सकता है।

2. पुलिस व अदालत में बार-बार हाजिरी व तारीखें पड़ना भी पीड़ित की झिझक के कारण बनते हैं।

3. अदालत में लंबी जिरह व प्रति परीक्षण एक अन्य कारण है। विशेष तौर पर स्त्री पीड़ित इस कारण से रिपोर्ट कराने में झिझकती हैं, यदि मामला बलात्कार आदि का हो।

4. चालान हो जाने पर भी सुनवाई की लंबी प्रक्रिया में होने वाले खर्च कई बार पीड़ित को अनुत्साहित करता है। विशेष तौर से सिविल मामलों में यह कारण अधिक प्रभावी होता है।

5. अपराधी के डर की वजह से भी पीड़ित व्यक्ति कई बार रिपोर्ट कराने में कोताही करता है।

उपर्युक्त कारणों से ही आपराधिक न्याय प्रशासन के चारों अंगों, यानि व्यवस्थापिका, पुलिस, न्यायपालिका, और सुधारक संस्थाओं के लिये वे संदेश निहित हैं जो उन्हें प्राप्त करने चाहिये और पीड़ित को ज्यादा से ज्यादा राहत पहुँचानी चाहिये।

पीड़ित शब्द का अर्थ

“पीड़ित ऐसा व्यक्ति होता है जिसके विरूद्ध कोई अपराध कारित किया जाता है। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो वह व्यक्ति ‘पीड़ित’ माना जायेगा जिसके अधिकारों का या हितों का हनन हुआ है। पीड़ित व्यक्ति के अंतर्गत उसके आश्रित या परिजनों को भी शामिल किया जाता है। पीड़ित व्यक्तियों के बारे में सामान्यतः कम सोचा जाता है। विभिन्न विद्वानों ने जो पीड़ित की परिभाषा दी है वह निम्नलिखित है:-

कोलिन्स अंग्रेजी शब्द कोष के अनुसार -

”पीड़ित का अर्थ किसी ऐसे व्यक्ति से होता है जो किसी दूसरे व्यक्ति से या किसी प्रतिकूल कार्य या परिस्थिति आदि से हानि या मृत्यु आदि को सहन करता है।”

[16] Von Henting – “The Criminal and his victim”
[17] Victimology in India – V.N. Rajan.

वेबस्टर के शब्दकोश के अनुसार पीड़ित का अर्थ है:-

"किसी व्यक्ति को अन्य व्यक्ति या संस्था द्वारा मृत्यु कारित कर देना या घायल कर दिया जाना, जो किसी देवता को या धार्मिक संस्कार के प्रदर्शन में किसी प्राणी की बलि दिया जाना"।

आपराधिक न्याय के संदर्भ में पीड़ित शब्द को ब्लैक के नियम शब्दकोश में परिभाषित किया गया है:-

"वह व्यक्ति जो किसी अपराध या यातना से पीड़ित हो, जैसा कि डकैती का शिकार हुआ व्यक्ति या लूट लिया गया व्यक्ति, उसे हम पीड़ित व्यक्ति कहेंगें"।

मैकमिलन शब्दकोश के अनुसार - "किसी व्यक्ति के द्वारा घायल कर दिया गया हो या उसके परिणामस्वरूप मार दिया गया हो, वह पीड़ित व्यक्ति कहलाता है।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 पीड़ित शब्द को निम्नानुसार परिभाषित करती है:-

"ऐसा व्यक्ति जिसे किसी कृत्य या लोप के कारण कोई हानि या क्षति हुई है। जिसके लिए अभियुक्त व्यक्ति को आरोपित किया गया है पीड़ित व्यक्ति कहलाता है। "पीड़ित" में उसके अभिभावक या कानूनी उत्तराधिकारी भी शामिल हैं।"

अपराध - पीड़ित की विधिक परिभाषा -

अपराध-पीड़ित को प्रपीडनशास्त्र की धुरी माना गया है क्योंकि प्रपीडनशास्त्र की समस्त विषय-वस्तु इसी से सम्बन्धित है।

अपराध पीड़ित से आशय ऐसे व्यक्ति से है जो किसी अपराध का शिकार हुआ हो और जिसके परिणामस्वरूप उसे कोई पीड़ा, उपहति, क्षति या हानि भोगनी पड़ रही हो। अपराध पीड़ित की विधिक परिभाषा दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 2 (डब्लू.ए.) में दी गई है जो इस प्रकार है -

"अपराध पीड़ित ऐसा व्यक्ति है जिसे किसी अपराध के घटित होने के कारण प्रत्यक्षतः कोई क्षति या हानि भुगतनी पड़ी हो या शारीरिक, मानसिक या आर्थिक नुकसान हुआ हो या यदि ऐसा व्यक्ति कोई संस्थागत इकाई हो, तो उसके अधिकृत व्यक्ति या प्राधिकृत प्रतिनिधि या समूह को किसी तरह का नुकसान जो सिविल या संवैधानिक विधि के अन्तर्गत आपराधिक न्याय व्यवस्था के अधीन सहायता के लिए पात्र माना गया हो।"

उल्लेखनीय है कि संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा द्वारा नवम्बर, 1985 मंे की गई घोषणा जिसमें सत्ता के दुरूपयोग के शिकार हुए व्यक्तियों के लिए न्याय के मूलभूत सिद्धान्तों को उद्घोषित किया गया था, में भी 'अपराध पीड़ित' को परिभाषित किया गया है, जो निम्नानुसार है -

अनुच्छेद- I (Article-I) - 'अपराध पीड़ित' से आशय उन व्यक्तियों से है जिन्हें व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से कोई शारीरिक, मानसिक या आर्थिक नुकसानी या मूल-अधिकारों का सारवान ह्नास भोगना पड़ा हो और ऐसी क्षति, हानि या ह्रास किसी सदस्य राष्ट्र में प्रवृत्त विधि के अन्तर्गत किसी व्यक्ति के कृत्य या कार्यलोप या सत्ता के दुरूपयोग के कारण कारित हुआ हो।

अनुच्छेद- II (Article-II) - इस घोषणा पत्र (1985) के अन्तर्गत किसी व्यक्ति को अपराध पीड़ित कहा जाएगा भले ही अपराधकर्ता पहचाना गया हो, पकड़ा गया हो अभियोजित या दोष सिद्ध हुआ हो या न हुआ हो और भले अपराधकर्ता और अपराध पीड़ित के मध्य पारिवारिक सम्बन्ध हो या न हो, तथा जहाँ उचित हो, इसमें वे व्यक्तिभी शामिल है जो पीड़ित के सगे-सम्बन्धी या आश्रित हों या जिन्हें पीड़ित की सहायता करने या पीड़ित होने से बचाने के दौरान कोई क्षति या हानि कारित हुई हो।

उपर्युक्त अनुच्छेद I एवं II के प्रावधानों को संयुक्त रूप से (एक साथ) पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि अपराधी के अपराध कृत्य के परिणामस्वरूप उससे प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः दुष्प्रभावित हुए विभिन्न व्यक्ति, जिन्हें कोई क्षति, हानि या नुकसानी हुई हो, या उनके किसी विधिक अधिकार का उल्लंघन या अतिक्रम हुआ हो 'अपराध-पीड़ित' कहलाते हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ घोषणा, 1985 के अन्तर्गत अपराध - पीड़ितों को दो मुख्य वर्गों में रखा गया है -(1) अपराध से पीड़ित तथा (Victims of Crime) (2) शक्ति के दुरूपयोग से पीड़ित (Victims of Abuse of Power)

1. अपराध -पीड़ित (Victims of Crime) -

अपराध का शिकार हुए पीड़ित को जो न्यायिक अधिकार प्राप्त हैं, वे निम्नानुसार है -

(I) न्याय प्राप्त करने तथा उचित व्यवहार का अधिकार - इसमें न्यायिक विचारण की प्रक्रिया के दौरान पीड़ित पक्षकार के साथ सद्भाव, सहानुभूति तथा गरिमामय व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। इसके साथ ही उसके परिवारों तथा आश्रितों की सहायता तथा उन्हें चिकित्सा खर्च दिलाना, पुनः स्थापित

www.ignited.in

करना, उनकी छीनी हुई सम्पत्ति आदि वापस दिलाना, आदि भी शामिल है।

(II) प्रतिकर का अधिकार - अपराध के कारण पीड़ित व्यक्ति को अपराधकर्ता से प्रतिकर दिलाया जाना पीड़ित का विधिक अधिकार है। यदि अपराधकर्ता प्रतिकर की सम्पूर्ण राशि का भुगतान करने में असमर्थ हो, तो पीड़ित को अन्य स्त्रोतों से आर्थिक सहायता के रूप में प्रतिकर दिलाया जाना चाहिए। संयुक्त राष्ट्र संघ घोषणा, 1985 में इस हेतु राज्यों द्वारा अपराध पीड़ितों के लिए राष्ट्रीय प्रतिकर कोष स्थापित किये जाने का सुझाव दिया गया है।

(III) सहायता का अधिकार - इस प्रकार की सहायता चिकित्सीय, भौतिक, मनोवैज्ञानिक या सामाजिक स्वरूप की हो सकती है। पीड़ित को स्वास्थ्य एवं सामाजिक सेवाएँ निःशुल्क उपलब्ध कराई जाएँ तथा उनके लिए उसकी योग्यता, सामथ्र्य या कौशल के अनुसार उचित प्रशिक्षण की व्यवस्था भी की लाए। अपकर्ता के विरूद्ध उन्हे समुचित संरक्षण दिलाया जाना चाहिए ताकि वह बदले की भावना से उन्हें हानि या उपहानि न पहुँचा सके।

अपराध पीड़ित - (Crime Victim) -

अपराध-पीड़ित से आशय ऐसे व्यक्ति, समूह या वर्ग से है जो किसी व्यक्ति द्वारा किये गए अवैध कृत्य या कार्यलोप (Act or omission) के कारण व्यथित, क्षतिग्रस्त या उत्पीड़ित हुए हैं। ऐसी उपहानि, क्षति या हानि शारीरिक, भौतिक, मानसिक या आर्थिक प्रकृति की हो सकती है। इस प्रकार के अपराध-पीड़ित को प्राथमिक पीड़ित (Primary Victim) कहा जाता है जबकि कुछ अन्य गौण-पीड़ित (Secondary Victims) भी हो सकते हैं जिन्हें प्राथमिक पीड़ित को हुई उपहति, क्षति या हानि के दुःखद एवं पीड़ादायक परिणाम भोगने पड़ते हैं। उदारणार्थ, बलात्कार की शिकार हुई महिला के बच्चे, जो पितृत्व की न्यूनता के कारण आजीवन जारज या अधर्मज संतान होने का लांछन ढोते रहते है, बलात्कार के अपराध के गौण-पीड़ित हैं जब कि वह महिला जिसके साथ बलात्कार हुआ है उसकी प्राथमिक पीड़ित होती है।

उल्लेखनीय है कि महिला कारावासी जिनके बच्चे 6 वर्ष से कम आयु के होते हैं, उन्हें अपनी माता के साथ कारागार में रहना पड़ता है क्योंकि उन्हें माता का सहारा आवश्यक होता है या उनकी घर पर देखभाल करने वाला कोई नहीं होता है। ऐसे बच्चे अपनी माँ के अपराध के गौण पीड़ित कहे जाते हैं जिन्हें ऐसे असुविधाजनक वातावरण में रहना पड़ता है जो उनके स्वास्थ्य, बालपन तथा विकास के लिए उपयुक्त नहीं होता है। ये बच्चे अपने बाल-अधिकारों, पौष्टिक आहार, मनोरंजन आदि से पूर्णतः वंचित रहते है तथा उन्हें कारावास के दूषित वातावरण में रहने के लिए बाध्य होना पड़ता है। यद्यपि इस सम्बन्ध में उच्चतम न्यायालय ने आर.डी.उपाध्याय बनाम आंध्र प्रदेश राज्य के बाद में इन गौण पीड़ित बच्चों के अधिकारों के संरक्षण हेतु निर्देश दिये हैं, परन्तु इनका अनुपालन यथावत हो रहा है अथवा नहीं, यह सुनिश्चित करने के लिए न्यायपालिका के पास कोई साधन नहीं है।

प्राथमिक तथा गौण पीड़ितों के अतिरिक्त पीड़ितों की एक अन्य श्रेणी भी है जिसे ‘‘तृतीयक पीड़ित’ (Tertiary Victim) कहा जाता है। ये अपराधी के अपराध कृत्य से उत्पन्न होने वाली पीड़ा या व्यथा के अलावा पीड़ित के अलावा किसी अन्य तीसरे व्यक्ति से है। उदाहरणार्थ, साम्प्रदायिक दंगों में अनेक मारे जाते हैं, घायल होते है या उनकी सम्पत्ति को घोर क्षति या हानि होती है या नष्ट हो जाती है और कभी-कभी तो पलायन की नौबत आ जाने के कारण उन्हें अपने निवास स्थल और घरों को त्याग कर विस्थापित भी होना पड़ता है। यहाँ दंगे से प्रत्यक्षः पीड़ित व्यक्ति प्राथमिक पीड़ित होते है, उनके सगे-सम्बन्धी या आश्रित व्यक्ति गौण पीड़ित होते है जबकि पलायन के लिये मजबूर हुए अल्प-संख्यकों के प्रति फैलाई गई द्वेष और तिरस्कार की भावना उनमें भय अशांति, अस्थिरता, असुरक्षिता या हिंसा का पुनः शिकार होने की सम्भावना आदि उत्पन्न करती है इसलिए वे इस अपराध के तृतीयक पीड़ित कहे जा सकते हैं।

अपराध पीड़ितों के इन तीन प्रकारों को एक अन्य दृष्टान्त द्वारा भी समझा जा सकता है। बलात्कार के अपराध में दुष्कर्म की शिकार हुई महिला को प्राथमिक पीड़िता तथा उसके पति या अधर्मज संतान को गौण पीड़ित कहा जाएगा। परन्तु बलात्कार के कारण उस पीड़िता तथा उसके परिवार को जो सामाजिक तिरस्कार, कलंक या लांछन भोगना पड़ता है वह उन्हे अपराध का तृतीयक पीड़ित बना देता है क्योंकि साधारणतः लोग ऐसे परिवार से सम्बन्ध न रखते हुए इनसे दूर ही रहना उचित समझते हैं। यहाँ तक कि पीड़िता के परिवार के सदस्यों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने से भी कतराते हैं। कुछ अपराशास्त्रियों का मानना है कि प्रचार-प्रसार माध्यम से जुड़े कर्मी, संवाददाता, समाचार-पत्र, दूरदर्शन आदि अपराधों के तृतीयक पीड़ितों के पीड़ाकरण (Victimization) के लिए मुख्यतः कारणीभूत होते है।

www.ignited.in

अपराध पीड़ित गवाहों के अधिकार एवं प्रकार -

आपराधिक न्याय प्रशासन में गवाह की स्थिति काफी महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि दंड के निर्धारण में गवाह की भूमिका अपरिहार्य हैं। परंतु यह एक विडम्बना ही है कि जिस गवाह की भूमिका इतनी महत्वपूर्ण मानी गई है, उसकी भूमिका निभाने के लिए अक्सर लोग आसानी से तैयार नहीं होते हैं। प्रायः घटना को देखने वाले लोग पुलिस द्वारा पूछताछ करने पर यातो घटनास्थल से खिसक जाते हैं या घटना को न देखने का बहाना बना देते है। जो व्यक्ति पीड़ित होने की स्थिति में न्याय पाने के लिए पुलिस और न्यायालय के सामने कमर कस कर खड़ा होता है वही व्यक्ति किसी और पीड़ित के मामले में गवाह बनने के लिए मना कर देता है।

इससे भी अधिक कष्टपूर्ण स्थिति वह होती है जब पुलिस द्वारा किसी शख्स को बहुत कोशिश करने के बाद गवाही देने के लिए तैयार किया जाता है, वही गवाह अदालत में जाकर पक्षद्रोही हो जाता है। इस स्थिति के लिए जनमानस में अपने अधिकार व कर्तव्य को एक समान न देख पाने की प्रवृत्ति काफी हद तक जिम्मेदार है। लेकिन हम सिर्फ नागरिकों की इस असहानुभूति पर ही इस समस्या को समाप्त नहीं कर सकते हैं। दरअसल न्याय प्रशासन की कमियाँ भी गवाह की प्रवृत्ति को कुंठित करती हैं जिन्हें इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है:-

(क) पुलिस और अदालत के सामने गवाही देने की प्रक्रिया में काफी समय व धन खर्च होता है और कई बार गवाह को अपमानजनक स्थिति में खड़े होकर प्रतीक्षा करनी पड़ती है। थानों व अदालतों में गवाहों के बैठने व जलपान करने की समुचित व्यवस्था नहीं होती है।

(ख) अदालत में जिरह के दौरान गवाह से बचाव पक्ष का वकील लंबी और कई बार परेशान करने वाली बातें पूछताहै। कई बार गवाह के आचरण को ही निशाना बनाया जाता है ताकि गवाह को अविश्वसनीय घोषित किया जा सके।

(ग) प्रायः मुकद्मे की सफलता के लिए गवाह को कोई श्रेय नहीं दिया जाता है इसके विपरीत अभियुक्त पक्ष द्वारा गवाह को पक्षद्रोही घोषित कराने के कई प्रयत्न शोधार्थी द्वारा देखें व सुने गये हैं। इस वजह से गवाह पक्षद्रोही होने को प्रवृत्त होता है।

(घ) कई बार खतरनाक अभियुक्तों द्वारा गवाह की गवाही न देने की धमकी दी जाती है, जिससे डर कर वह इन्कार कर देता है।

(ड) पुलिस के स्तर पर एक बात इस प्रसंग में जिक्र करने लायक है। पुलिस आयोग द्वारा एक रिसर्च कराने पर यह तथ्य सामने आया कि पुलिस द्वारा गवाहों को धमकाने व झूठे गवाह खड़े करने की प्रवृत्ति अपनाई जाती है। गवाहों के साथ भद्दी जुबान में पूछताछ की जाती है और घंटो तक गवाहों को खड़े रखा जाता है।

(च) सीमा क्षेत्र व अशांत क्षेत्रों में कई बार उग्रवादियों के गांव में छिपे होने की सूचना मिलने पर पुलिस व सुरक्षा बलों द्वारा पूरे गांव को घेरा जाना जरूरी होता है और गाँव के लोगों से गवाह के रूप में पूछताछ की जाती है। मानवाधिकार संगठनों व लोगों द्वारा यह आरोप लगाया जाता है कि ऐसे मौकों पर बलों द्वारा शरीफ लोगों के साथ कठोरता से पूछताछ व मारपीट करके मानवाधिकार का उल्लंघन किया जाता है। मई 97 में आलपार्टी हुर्रियत कांफ्रेस के नेता यासीन मलिक ने नई दिल्ली में अनशन करके इसी प्रकार के आरोप लगाए थे।

उपरोक्त परिस्थितियों में आपराधिक न्याय-प्रशासन पर लगे आरोप कितने हद तक सही हैं, यह जांच का विषय है। मगर इतना तय है कि नागरिकों में इस प्रकार की छवि के रहते हुए उन्हें गवाह बनने को प्रेरित करना मुश्किल होगा। खास तौर पर यह इसलिए चिंताजनक बात है कि "अनुसंधान अधिकारी और अदालतें फोरेंसिक विज्ञान के सबूतों की बजाय गवाहों द्वारा पेश की गई गवाहियों को सुनने व मानने के लिए ज्यादा तत्पर रहते हैं। इस समस्या से निपटने का यही सबसे अच्छा तरीका है कि गवाहों के अधिकारों को ध्यान में रखा जाए और उनके अधिकारों का सम्मान किया जाए। सबसे पहले पुलिस बल के प्रत्येक स्तर के अधिकारी को गवाहों की कानूनी स्थिति और उनके अधिकारों के बारे में जानकारी होना जरूरी है।

विधिक सुधारो द्वारा अपराध-पीड़ित के अधिकारों का संरक्षण-

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सन् 1985 में सत्ता के दुरूपयोग तथा अपराध-पीड़ितों के लिए न्याय के मूलभूत सिद्धान्तों" की घोषणा की गयी थी। इनसे प्रेरणा लेते हुए भारत सहित अनेक

www.ignited.in

देशो ने अपराध पीड़ितों की सहायता के लिए कारगर उपाय किये हैं और पीड़ित सहायता केन्द या समितियां गठित की हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अपराध पीड़ितों के परिपेक्ष्य में भारत में भी पीड़ितों के पुनःस्थापन को विधिक मान्यता प्रदान की है जिसे दण्ड प्रक्रिया (संशोधन) अधिनियम, 2008 द्वारा संहिता में नई धारा 357-ए जोड़कर दण्ड प्रक्रिया विधि के एक प्रावधान के रूप में दिनांक 31 दिसम्बर, 2009 में प्रवृत्त किया गया है। इस धारा के प्रावधान निम्नानुसार है -

पीड़ितों के लिए प्रतिकर योजना धारा 357-ए के अनुसार -

(1) प्रत्येक राज्य सरकार केन्द्रीय सरकार के साथ मिलकर ऐसे पीड़ित या उसके आश्रितों की, जिन्हें अपराध के परिणामस्वरूप हानि या क्षति हुई है जिन्हें पुनर्वास की आवश्यकता है, प्रतिकर के प्रयोजन के लिए निधियाँ उपलब्ध कराने हेतु योजना तैयार करेगी।

(2) जब कभी न्यायालय द्वारा प्रतिकर (Compensation) के लिये अनुशंसा की जाती है तब जिला विधिक सेवा प्राधिकरण या राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण, यथास्थिति, उपधारा (1) में निर्दिष्ट योजना के अधीन दिये जाने वाले प्रतिकर की मात्रा का विनिश्चिय करेगा।

(3) यदि विचारण की समाप्ति पर विचारण न्यायालय का समाधान हो जाता है कि धारा 357 के अधीन अधिनिर्णीत प्रतिकर ऐसे पुनर्वास के लिए पर्याप्त नही है या जहाँ मामले दोषमुक्ति या उन्मोचन पर समाप्त हो जाते है और पीड़ित को पुनर्वास करना है, वहाँ वह प्रतिकर के लिए अनुसंशा कर सकेगा।

(4) जहाँ अपराधी का पता नही चल पाता है या उसकी पहचान (शिनाख्त) नहीं हो पाती है, वहाँ पीड़ित या उसके आश्रित प्रतिकर दिये जाने के लिए राज्य या जिला विधिक सेवा प्राधिकरण को आवेदन कर सकेंगे।

(5) उपधारा (4) के अधीन ऐसी अनुशंसाएँ या आवेदन-पत्र प्राप्त होने या राज्य या जिला विधिक सेवा प्राधिकरण, सम्यक जाँच के पश्चात दो मास के भीतर जाँच पूरी करके पर्याप्त प्रतिकर अधिनिर्णीत करेगा।

(6) राज्य या जिला विघिक सेवा प्राधिकरण, यथास्थिति, पीड़ित की यातना को कम करने के लिए पुलिस थाने के भारसाधक से अन्यून पंक्ति के पुलिस अधिकारी का सम्बद्ध क्षेत्र मजिस्ट्रेट के प्रमाण पत्र पर निःशुल्क उपलब्ध कराई जाने वाली प्रथम सहायता सुविधा या चिकित्सीय प्रसुविधाओं या कोई अन्य अन्तरिम अनुतोष (Interim Relief) जिसे समुचित प्राधिकरण ठीक समझे के लिए तुरन्त आदेश कर सकेगा।

अपराध पीड़ितों से सम्बन्धित विधायी नीति और विधिक सुधार-

अपराध पीड़ितों की पीडा, व्यथा, मनोवृत्ति तथा समस्याओं के निवारण हेतु एक व्यापक विद्यायिनी नीति, की आवश्यकता अभी भी बनी हुई है ताकि उस पर आधारित विधिक सुधारों का क्रियान्वयन हो सके। इस सम्बन्ध में वर्तमान विधिक प्रावधानों को अधिक परिणाम मूलक और व्यावहारिक बनाने के लिए इनमें कुछ और अधिक सुधारों की आवश्यकता है। इस हेतु विधायनी नीति निम्नलिखित मूल सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए -

(1) अपराध - पीड़ितों को उनका खोया हुआ सम्मान, प्रतिष्ठा तथा दैहिक स्वतन्त्रता एवं निजता का अधिकार दिलाने हेतु संविधानिक प्रावधान होने चाहिए।'[18]

(2) यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि अपनी पीड़ा और संत्रास के कारण अपराध-पीड़ित समाज की मुख्य धारा से कट जाते है इसलिए उन्हें सामाजिक समर्थन और विधिक सहारे की नितांत आवश्यकता होती है।

(3) अपराध पीडितों को उचित क्षतिपूर्ति या प्रतिकर दिलाया जाना दायित्व यथा सम्भव अपराध के लिए दोषी अभियुक्त पर अधिरोपित होना चाहिए और उसकी असमर्थता की दशा में इसे राज्य या केन्द्र सरकार द्वारा वहन किया जाए।

(4) अपराध - पीड़ित अपने मामले के विचारण में अहम प्रत्यक्षदर्शी गवाह होने के कारण उसकी साक्ष्य को गम्भीरता से लिया जाना चाहिये क्योंकि वह उसके साथ घटित आपराधिक वार्ता की वास्तविक जानकारी उपलब्ध कराने का मुख्य स्त्रोत होता है।

(5) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 में सन् 2005 के अपराध विधि संशोधन द्वारा एक नई धारा 265-ए जोड़ी गई जिसके अनुसार अपराधी को 'अभिवाक् की सौदेबाजी' (Plea Bargaining) की सुविधा उपलब्ध कराई गई है,

[18] मेक्सिको ने अपने संविधान में संशोधन करके अपराध पीड़ितों के सांविधानिक अधिकारों का उसमें समावेश किया है।

जिसमें अभियोजन पक्ष की सहमति से वह उसके द्वारा कारित अपराध की श्रेणी का कम गम्भीर अपराध स्वीकार करके विचारण को तत्काल निपटाने की प्रार्थना कर सकता है। इस धारा के अन्तर्गत अभियुक्त का आवेदन विचारार्थ ग्रहण किये जाने के पूर्व न्यायालय को यह सुनिश्यिचत कर लेना चाहिए कि इससे अपराध-पीड़ित को किसी वैधानिक अधिकार या हक पर विपरीत प्रभाव तो नही पड़ेगा। ऐसा इसलिये भी आवश्यक है क्योंकि अभियोजन पक्ष मामले को शीघ्र समाप्त करा देने की उत्सुकता में पीड़ित की व्यथा एवं अधिकारों को प्रायः नजरअंदाज कर देता है जिसका पीड़ित पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

(6) अपराध-पीड़ित के संविधानिक अधिकारों के संरक्षण के अतिरिक्त उनके मानवाधिकरों तथा सामाजिक अधिकारों की भी उचित संरक्षा की जानी चाहिए ताकि वे समाज में उपेक्षित न रहें और अवहेलना के पात्र न समझे जाएँ।

पीड़ित और पुलिस -

पुलिस ही वह संस्था है जिससे पीड़ित व्यक्ति प्रायः सबसे पहले संपर्क में आता है। मानवाधिकारों के इस दौर में पीड़ित व्यक्ति के भी कई अधिकार सुनिश्चित है। पुलिसकर्मियों को इन अधिकारों को जान लेना आवश्यक है। यह आवश्यक है कि पीड़ित के अधिकारों का पुलिस सम्मान करें।

(1) पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी के लिये यह अनिवार्य है कि वह प्रत्येक संज्ञेय अपराध की प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करे। धारा 154 दण्ड प्रक्रिया संहिता के द्वारा यह प्रावधान प्रतिबंधात्मक बनाया गया है। यदि पीड़ित व्यक्ति की रिपोर्ट दर्ज नहीं की जाती है तो इसी धारा की उपाधारा (3) के अनुसार पीड़ित व्यक्ति यह रिपोर्ट पुलिस अधीक्षक को दे सकता है। आजकल सभी राज्यों में पीड़ित व्यक्ति के इस अधिकार के हनन को गंभीरता से लिया जाता है और थाना प्रभारी की दुर्भावना प्रमाणित होने पर गंभीर दंड दिये जाते है। उदाहरण के लिए राजस्थान पुलिस नियम 1965 के नियम 5.2 (2) में थाना प्रभारी द्वारा निःशुल्क रिपोर्ट दर्ज करने की घोषणा थाने के बाहर प्रदर्शित करने का आदेश दिया गया है, ताकि पीड़ित व्यक्ति के इस अधिकार का उसे ज्ञान हो सके।

धारा 155 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अनुसार असंज्ञेय मामले में इत्तिला देने वाले को थाना प्रभारी द्वारा मजिस्ट्रेट के पास जाने को निर्देशित किया जायेगा। व्यवहारिक रूप से इस प्रावधान ने पुलिस संगठन के सामने एक बहुत बड़ी दुविधा खड़ी कर दी है। कानून से अनजान एक व्यक्ति थाने में आता है और रिपोर्ट दर्ज कराता है। उसे उम्मीद है कि पुलिस तुरन्त मौके पर जाएगी और सम्मस्या को हल कर देगी। पुलिस थाने के मुंशी ने पाया कि रिपोर्ट असंज्ञेय है और पुलिस इसमें कार्यवाही नहीं कर सकती हैं, इसलिए कार्यवाही बंद कर दी जाती है। ऐसी हालत में प्रार्थी यह सोचता है कि पुलिस कार्यवाही में कोताही कर रही है या दसरी पार्टी से मिल गई है। यदि उसे समझाने की कोशिश की जाये कि वह अदालत में कार्यवाही करे, तो भी उसे यह लगता है कि पुलिस अपनी बला को अदालत के सिर टालना चाहती है। ऐसी स्थिति में वह पुलिस के खिलाफ अनर्गल बातें करता है।

इस समस्या पर गंभीरता से विचार करने की जरूरत है कि इसका हल क्या हो? कुछ पुलिस अधिकारी इन मामलों का रूप बदल कर संज्ञेय अपराध के रूप में मुकद्मा दर्ज करने की राय देते हैं। पर हर स्थिति में रिपोर्ट का मजमून बदलना पुलिस के हाथ में नहीं होता है। इसका समाधान यह हो सकता है कि जिस तरह अदालतों ने एक नई व्यवस्था छोटे मामलों के लिये "लोक अदालत" के रूप में स्थापित की है, उसी तरह पुलिस संगठन में कोई शाखा बने,जो असंज्ञेय मामले के पीड़ित पक्ष को संतुष्ट करने की कोशिश करे।

इस कार्यवाही को कानूनी आधार नही मिल सकता, क्यांेकि इस मामले में पुलिस कोई कार्यवाही नहीं कर सकती हैं। मगर समझाइश जैसी नैतिक नीति का अवलंब लिया जा सकता है जिसका निर्देश पुलिस आचरण संहिता की धारा 4 में किया गया है।

(2) पीड़ित व्यक्ति की पीड़ा को पुलिस अधिकारियों द्वारा सहानुभ्ूातिपूर्वक सुना जाना चाहिये। आमतौर पर देखा जाता है कि पीड़ित व्यक्ति को अपराधी द्वारा शारीरिक, मानसिक, आर्थिक या प्रतिष्ठा की हानि पहुँचाई जाती है, इसलिए उस समय पीड़ित व्यक्ति बहुत क्रोध और असंतुलन की स्थिति में होता है। संभव है कि वह गुस्से में बहुत बढ़ा-बढ़ा कर आरोप लगा रहा हो। अपराधियों की संख्या और चोटों की प्रकृति के बारे में बढ़ा कर कहने की प्रवृति पीड़ित की मनोवैज्ञानिक स्थिति के कारण होती है। अन्य कारण भी इस प्रवृत्ति के पाये गये हैं -

www.ignited.in

(क) जहाँ दो पार्टियों मे पुरानी रंजिश हो वहाँ पीड़ित व्यक्ति पार्टी के लोगों से विचार-विमर्श करके ऐसी रिपोर्ट थाने में लिखवाता है जिसमें दूसरी पार्टी के ज्यादा से ज्यादा लोग अभियुक्त के रूप में नामित किये गये हों।

(ख) कानूनी सलाहकार से राय लेकर लिखाई गई रिपोर्ट भी तथ्यों से दूर पायी जाती है, क्योंकि सलाहकार ऐसी रिपोर्ट लिखवाता है, जिसमें पीड़ित के दोषों को छिपाया गया हो और अभियुक्त के ही दोष दिखाये गये हों।

(ग) आर्थिक अपराधों या आर्थिक क्षति के मामले में संपत्ति का ब्यौरा बढ़ा-चढ़ा कर दिया जाता है। इसके पीछे कारण यह हो सकता है कि बीमा दावा ज्यादा राशि का किया जा सके या बरामदगी ज्यादा राशि की कराई जा सके।

(घ) कई बार दीवानी (Civil) मामलों में दूसरी पार्टी पर दबाब डालने के लिए पीड़ित द्वारा तथ्यों को बदल कर फौजदारी (Criminal) मामला बता कर थाने में रिपोर्ट कराई जाती है।

इन सब मामलों में भी पुलिस को चाहिये की बात शांति से सुने और रिपोर्ट तुरंत दर्ज करे। सच्चाई पहले से पता नहीं लगती है, बल्कि अनुसंधान के बाद पता लगती है। बाद में अगर रिपोर्ट झूठी लिखवाना साबित हो तो भारतीय दंड संहिता की धारा 182 या 211 के तहत कार्यवाही की जा सकती है।

(3) महिला पीड़ित के मामले मे पुलिस को सावधानी और संवदेनशीलता से काम लेना चाहिये। अच्छा यह रहता है कि ऐसे मामले में पुरूष पुलिसकर्मी की बजाय महिला पुलिसकर्मी द्वारा कार्यवाही की जाये। इस तरह की मांग महिला संगठनों के बजाय राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा भी की जा चुकी है। इस मांग के पीछे दो कारण है:-

(अ) महिला संगठनों को पुरूष प्रधान पुलिस व्यवस्था में प्रायः विश्वास नहीं होता है वे मानते हैं कि पुलिस अभियुक्तों के दबाव में आकर मामले को रफादफा कर सकती है।

(ब) पीड़ित महिला अपने साथ हुए बलात्कार या मारपीट के बारे में महिला अधिकारी को साफ बता सकती है। अतः कोशिश की जानी चाहिये कि पीड़ित महिला के मामले में अनुंसधान अधिकारी महिला पुलिस अधिकारी हो। यदि ऐसा संभव नहीं हो तो महिला के मेडिकल मुआयने आदि के समय महिला पुलिसकर्मी मौजूद रहे। महिला का मेड़िकल मुआयना अनिवार्य रूप से महिला डॉक्टर द्वारा होना चाहिये। आजकल ज्यादातर शहरों में महिला पुलिस स्टेशन स्थापित किये गये हैं। सबसे पहले ऐसा प्रयोग केरल में किया गया था जहाँ वनिता पुलिस स्टेशन स्थापित किया गया था। इन थानों में महिला पुलिस का स्टाफ होता है। महिला अपराध के मामलों में निगरानी के लिये राज्य मुख्यालयों पर 'महिला अपराध प्रकोष्ठ' भी बनाये गये हैं।

(4) वाहन दुर्घटना के अपराधों में पुलिस अधिकारियों को खास सतर्कता रखने की जरूरत होती है। यदि पीड़ित व्यक्ति जख्मी होकर मौके पर पड़ा है तो पुलिस अधिकारी को तुरंत मौके पर जाकर कार्यवाही करनी चाहिये। यदि दुर्घटना में जख्मी पीड़ित थाने में आता है तो शीघ्रता से रिपोर्ट लिखकर इलाज व चोटों के परीक्षण के लिये उसे चिकित्सालय पहुँचाना चाहिये।

बिना दोष दायित्व (No Fault Libility)

दुर्घटना के मामले में जो व्यक्ति किसी वाहन के द्वारा मारे जाते हैं या गंभीर (स्थाई) रूप से अयोग्य हो जाते हैं उन्हें क्लेम की राशि प्राप्त होती है, चाहे वाहन चालक की गलती न होकर स्वयं पीड़ित की ही गलती रही हो। यह क्लेम बीमा आदि से अलग होता है। इसकी राशि मृत्यु के मामले में उसके परिजनों को 25,000 रू. व स्थाई शारीरिक अयोग्यता में 12,500 रू. होती है। पुलिस अधिकारी को चाहिये कि ऐसी सूचना पीड़ित या उसके परिजनों को दे और क्लेम दिलाने में मदद करे। भारतीय मोटर वाहन अधिनियम की धारा 110 के अनुसार इस तरह की क्षतिपूर्ति पीड़ित या उसके परिजन को दी जा सकती है।

पुलिस संगठनों के सामने एक स्थिति ऐसी भी आती है जब किसी सांप्रदायिक दंगे, जातीय झगड़े, डकैती या आतंकोदी हमले के कारण एक साथ बहुत से लोग पीडित हुये हों। आतंकवाद प्रभावित इलाकों जैसे जम्मू व कश्मीर, पंजाब और उत्तर पूर्व राज्यों में केंद्रीय पुलिस संगठनों के सामने ऐसी स्थिति अक्सर आती है जब कि पूरे गांव पर हमला करके सामूहिक नरसंहार किया गया हो। उदाहरण के लिये 'बोडो सिक्योरिटी फोर्स' (बी.एस.एफ.) ने 19 जुलाई, 1992 को गुलाहांडी गांव में अन्य

जनजाति के लोगों पर हमला किया व पूरे गांव को श्मशान में बदल दिया। इसी तरह बंगालियों पर भी इस इलाके में सामूहिक हमले किये जाते हैं। बिहार में जातीय झगड़ों के कारण सामूहिक नरसंहार आमतौर पर होते है। उत्तर प्रदेश का बेहमई नरसंहार बहुत प्रचारित किया गया है। ऐसी स्थिति में पुलिस संगठन के सामने अनेक चुनौतियाँ आती हैं, चाहे राज्य पुलिस हो या बी.एस.एफ. या सी.आर.पी.एफ.। सबसे पहले पीड़ितों को चिकित्सा सुविधा प्रदान करने में पुलिस को मदद करनी चाहिये। साथ ही पीड़ितों के गुस्से से मनोवैज्ञानिक तरीके से निपटना चाहिये। पीड़ितों से बयान लेते समय यह सावधानी रखनी चाहिये कि अगर वह अपने बयानों में डर की वजह से अपराधी का नाम नहीं बता पा रहा है तो उसे दिलासा दी जाये व नाम गुप्त रखने की कोशिश किया जाये। बयान लेते समय उनकी पीड़ा को कुरेदा नहीं जाना चाहिये। महिलाओं और बच्चों से पूछताछ करते समय खास तौर पर तसल्ली से काम लेना चाहिये। लाशों को जल्दी से जल्दी पोस्टमार्टम करके हटाने की कोशिश की जानी चाहिये, ताकि क्षेत्रीय नेता व निहित स्वार्थी तत्व लाशों को प्रतीक बना कर मामले को ज्यादा संवदेनशील न बना सकें। कुछ प्रतिगामी लोग अपनी नेतागिरी का मुद्दा तलाशने के लिये इस मौके का फायदा उठाने की कोशिश करते हैं और भाषणबाजी करके पीड़ित वर्ग को उकसाने लगते हैं। ऐसे मामलों में बहुत ही सावधानी से काम लेकर उन्हें आश्वासन देना चाहिये कि अभियुक्तों को तुरंत गिरफ्तार करने की कोशिश की जायेगी। पुलिस की एक पार्टी को नियुक्तों की तलाश के लिये रवाना किया जाना चाहिये।

अपराध और शक्ति - दुरूपयोग के पीड़ितों को न्याय हेतु घोषणा:

सन् 1985 में संयुक्त राष्ट्र की सातवीं कांग्रेस का आयोजन "अपराधों की रोकथाम व अपराधियों से व्यवहार" विषय पर हुआ। इसके आधार पर उपर्युक्त घोषणा संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा 29 नवंबर, 1985 को की गई। पूरे विश्व में पीड़ितों को न्याय दिलाने हेतु सिद्धांत इस घोषणा में प्रतिपादित किये गये हैं जो सभी सदस्य राष्ट्रों में लागू हैं। पुलिस अधिकारियों को इन सिद्धांतों की जानकारी होना बहुत आवश्यक है, जिनमें मुख्य इस प्रकार हैं -

(अ) अपराधों के पीड़ित

धारा - 1 'पीड़ित' से अर्थ है कि वह व्यक्ति जिसके साथ व्यक्तिगत या सामूहिक रूपसे शारीरिक या मानसिक क्षति, भावनात्मक पीड़ा, आर्थिक हानि या मूल अधिकारों का वंचन, किसी कार्य या कार्यलोप से कारित किये गये हैं और जो सदस्य राष्ट्रों में लागू कानूनों के उल्लंघन द्वारा किये गये हैं।

धारा 3 - इस घोषणा में शामिल प्रावधान सभी पर लागू होंगे, बिना किसी भेदभाव के, जो प्रजाति, रंग, लिंग, आयु, भाषा, धर्म, राष्ट्रीयता, राजनैतिक मत, सांस्कृतिक विश्वास, संपत्ति, जन्म परिवार, सामाजिक मूल के आधार पर हों।

धारा 4- न्याय तक पहुँच:- पीड़ित व्यक्ति धैर्य और सम्मान के साथ व्यवहत किये जायेंगे। वे न्यायतंत्र तक पहुँच के हकदार हैं और राष्ट्रीय कानूनों के अनुसार हानि से उन्हें प्रतिकर (Redre) दिलाया जायेगा।

धारा 5-न्यायिक और प्रशासनिक तंत्र द्वारा पीड़ित का प्रतिकर तुरंत, न्यायपूर्वक और कम खर्च पर किया जायेगा। पीड़ित को तुरंत प्रतिकर के अधिकार की जानकारी दी जायेगी।

धारा 6 - न्यायिक और प्रशासनिक उत्तरदायिता में पीड़ित के लाभके लिये इस प्रकार सुविधा प्रदान की जायेगी -

(1) लाभके समय व उसके मामले की प्रगति के बारे में सूचना दी जायेगी।

(2) प्रक्रिया को अपराधीके प्रति पूर्वाग्रह के बिना और संबंधित राष्ट्रीय आपराधिक न्याय प्रणाली के अनुसार चलाया जायेगा।

(3) पीड़ित को सहायता कानूनी प्रक्रिया द्वारा दी जाऐगी।

(4) पीड़ित के व्यय को न्यूनतम करने, अंतरंगता की रक्षा करने, सुरक्षा को सुनिश्चित करने व उसके परिवार व उसके गवाहों को सहायता देने के कदम उठाये जायेंगे।

(5) मामलों को निपटाने में अनावश्यक देरी को रोका जायेगा।

धारा 8 - प्रत्यर्पण - अपराधी या तीसरे पक्ष के द्वारा प्रत्यर्पण पीड़ित को या उसके परिवार को या आश्रितों को दिलाया जायेगा। यह प्रत्यर्पण संपत्ति की वापसी, क्षति के भुगतान और व्यय के पुनर्भरण के रूप में होगा।

धारा 9 - सरकार इस बात का मूल्यांकन करेगी कि प्रत्यर्पण को लागू करने संबंधी कानून व प्रक्रिया के द्वारा इसे दांडिक विकल्प के रूप में अन्य आपराधिक दंडादेशों के अलावा दिया जायेगा।

www.ignited.in

धारा 10 - जहाँ लोकसेवक द्वारा या शासकीय अथवा अर्द्ध-शासकीय पद पर कार्य कर रहे कर्मी द्वारा कानून का उल्लंघन किया गया हो, वहाँ प्रत्यर्पण राज्य द्वारा पीडित को दिया जायेगा। यदि कोई सरकार, जिसके अधीन अधिकारी द्वारा पीड़ित किया गया हो, सत्ता में न रहे हो तो उसकी उत्तराधिकारी सरकार द्वारा प्रत्यर्पण किया जावेगा।

धारा 12 - क्षतिपूर्ति (Compensation) - जब अपराधी या किसी तीसरे स्त्रोत द्वारा राशि पूरी तरह पीड़ित को नही दी गई हो, वहाँ राज्य द्वारा आर्थिक क्षतिपूर्ति देने की व्यवस्था की जायेगी -

(क) पीड़ित को, यदि गंभीर अपराध के द्वारा उसे शारीरिक क्षति पहुँची हो या शारीरिक अथवा मानसिक स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ा हो।

(ख) परिवार को, यदि पीड़ित व्यक्ति मर गया हो या शारीरिक या मानसिक रूप से अक्षम हो गया हो।

धारा 13 -पीड़ित को क्षतिपूर्ति देने के लिये राष्ट्रीय कोष (National Fund) को स्थापित व वर्द्धित किया जायेगा।

धारा 14 - सहायता (Assistance) - पीड़ित व्यक्ति को सरकारी, स्वैच्छिक व सामुदायिक साधनों द्वारा आर्थिक, चिकित्सीय, मनोवैज्ञानिक व सामाजिक सहायता दी जायेगी।

धारा 15 - पीड़ित को स्वास्थ्य और सामाजिक सेवाओं की उपलब्धता की सूचना दी जायेगी और पीड़ित की पहुँच संभव कराई जायेगी।

धारा 16 - पीड़ित व्यक्ति की आवश्यकता व सहायता के तरीकों के बारे में पुलिस, न्याय, स्वास्थ्य व सामजिक सेवाओं के कर्मियों को प्रशिक्षण दिया जायेगा।

(ब) शक्ति के दुरूप्रयोग के पीड़ित -

धारा-18 पीड़ित का अर्थ है वह व्यक्ति जिसके साथ व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से शारीरिक या मानसिक क्षति, भावनात्मक पीड़ा, आर्थिक हानि, मूल अधिकारों का वंचन आदि ऐसे कार्य या कार्यलोप (Act or omission) द्वारा किये गये हैं, जो राष्ट्रीय कानूनों का उल्लंघन नहीं हैं, पर अंतर्राष्ट्रीय रूप से स्वीकृत मानव अधिकार मानकों का उल्लंघन है।

धारा 19 - राज्य को शक्ति के ऐसे दुरूपयोग और पीड़ित के उपचार को राष्ट्रीय कानून में शामिल करने पर विचार करना चाहिये। ऐसे उपचार में प्रत्यर्पण (Restitution), क्षतिपूर्ति (Compensation) व आर्थिक, चिकित्सीय, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक सहायता शामि होनी चाहिये।

धारा 20 - राज्य को पीड़ितों के बारे में अंतर्राष्ट्रीय बहुआयामी संधियों से आदान प्रदान करने के बारे में विचार करना चाहिये।

धारा 21 - राज्य को मौजूदा विधानों व प्रक्रिया पर समय-समय पर पुनर्विचार करना चाहिये ओर बदलती परिस्थितियों में उनकी उत्तरदायिता बढ़ानी चाहिये।

(2) धारा 359, दंड प्रक्रिया संहिता के अनुसार असंज्ञेय मामलों में यह आदेश न्यायालय दे सकता है कि अपराधी परिवादी को अभियोजन में किये गये खर्चे दे।

(3) धारा 110 (ठ) भारतीय मोटर वाहन अधिनियम, 1939 यह उपबंध करता है कि जख्मी या मृतक को क्षतिपूर्ति दी जावे।

(4) धारा 5, अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1958 के अनुसार भी अपराधी को परीवीक्षा पर छोड़े जाने पर पीड़ित को क्षतिपूर्ति देने के लिये कहा जा सकता है। इस धारा के बारे में कुछ विस्तार से चर्चा करना समीचीन है -

धारा 5 - छोड़े गये अपराधियों से प्रतिकर और खर्च देने की अपेक्षा करने की न्यायालय की शक्ति -

(1) धारा 3 या धारा 4 के अधीन अपराधी को छोड़ने का निर्देश देने वाला न्यायालय यदि ठीक समझता है तो उसी समय तक अतिरिक्त आदेश कर सकेगा, जिसमें उसे निम्नलिखित देने के लिये निर्देशित किया जायेगा -

(क) अपराध के किये जाने से किसी व्यक्ति को हुई हानि या क्षति के लिये इतना प्रतिकर जितना न्यायालय युक्तियुक्त समझता है।

(ख) कार्यवाहियों के इतने खर्चे जितना न्यायालय युक्तियुक्त समझता है।

(2) उपधारा (1) के अधीन दिये जाने के लिये आदेशित रकम दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 386 व 387 के उपबंधों के अधीन जुर्माने के रूप में वसूल की जायेगी।

(3) अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति (S.C. & S.T.) (उत्पीड़न निवारण) अधिनियम 198 की धारा 21 के अनुसार - अधिनियम का प्रभावी कार्यान्वयन

सुनिश्चित करने का सरकार का कत्र्तव्य बतलाया गया है।

उपसंहार

उपरोक्त परिस्थितियों में आपराधिक न्याय-प्रशासन पर लगे आरोप कितने हद तक सहीहैं, यह जांच का विषय है। मगर इतना तय है कि नागरिकों में इस प्रकार की छवि के रहते हुए उन्हें गवाह बनने को प्रेरित करना मुश्किल होगा। खास तौर पर यह इसलिए चिंताजनक बात है कि “अनुसंधान अधिकारी और अदालतें फोरेंसिंक विज्ञान के सबूतों की बजाय गवाहों द्वारा पेश की गईगवाहियों को सुनने व मानने के लिए ज्यादा तत्पर रहते हैं। इस समस्या से निपटने का यही सबसे अच्छा तरीका है कि गवाहों के अधिकारों को ध्यानमें रखा जाए और उनके अधिकारों का सम्मान किया जाए। सबसे पहले पुलिस बल के प्रत्येक स्तर के अधिकारी को गवाहों की कानूनी स्थिति और उनके अधिकारों के बारे में जानकारी होना जरूरी है।

सन्दर्भ सूची

1. Von Henting – “The Criminal and his victim”
2. Victimology in India – V.N. Rajan.
3. बनर्जी टी.के. “बैकग्राउण्ड टू इंडियन क्रिमिनल लॉ, ओरिएंटल लाचामैन“
4. बार्नस, हैरी एल्मर एंड टीटर्स, नेगले के, न्यू होराइजन्स इन क्रिमिनोलॉजी 210, 3 आर.डी. एंड एंगलवुड फ्लिपन्स 2011.
5. 5. 2006](4) SCALE 336 डॉ. शेरीन सिद्दीकी ‘Secondary Victims : Understanding the Rule of Mother’s incarceration, इंडियन पुलिस जर्नल Vol. LVII No.-4 अक्टूबर-दिसम्बर 2010.
6. Willian G. Doerner & Steve Lab: Victimology (Ohio-1995) P. 47.
7. Rachel Mathison: Criminal Victimization, the world society of Victimology (No.-30 of 2009) P-123.
8. जस्टिस के. जयचंद्र रेड्डी (चेयरमैन लॉ कमीशन) द्वारा राष्ट्रीय पुलिस अकादमी हैदराबाद के सियोजियम में 28 अक्टूबर 1996 को प्रस्तुत पेपर
9. 9. Victimology in India – V.M. Rajan Page-90.
10. 10. Declaration of Basic Principles of Justice for Victims of abuse of Power and Crime 1985.
11. बेल्जियम, कनाडा, फ्रान्स, जर्मनी, जापान, इजराइल, मेक्सिको, न्यूजीलैण्ड, ब्राजील, ब्रिटेन, अमेरिका आदि देषों में अपराध पीड़ितों के उद्धार की दिषा में उल्लेखनीय प्रगति की है।
12. धारा-357.। दण्डप्रक्रिया संहिता (संशोधन अधिनियम 2008 (2009 का 5वां) द्वारा अन्तः स्थापित की गई। दिनांक 31.12.2009 से प्रभावी।
13. मेक्सिको ने अपने संविधान में संशोधन करके अपराध पीड़ितों के सांविधानिक अधिकारों का उसमें समावेश किया है।
14. श्री आर.के. राघवन, महानिदेशक पुलिस, तमिलनाडु द्वारा राष्ट्रीय पुलिस अकादमी सिम्पोजियम अक्टूबर-1996 में प्रस्तुत पत्र।

Corresponding Author

Pushpalata Patel*

Research Scholar, SVNU, Sagar, MP

www.ignited.in